International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 04(I), October - December, 2023, pp. 55-60

नारी सशक्तीकरण एवं वर्तमान सामाजिक ढांचा : एक अवलोकन

डॉ. बिरेन्द्र कुमार*
कल्पना भारती**

सार

वर्तमान समय में नारी सशक्तीकरण की अवधारणा के आधारभूत तत्व महिला का आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होना एवं एकल लैंगिक सम्बन्धों से विद्रोह का होना माना जाता है। निःसन्देह प्राचीन समाज में पुरुषों ने प्राचीन सामाजिक ढांचे के स्वरूप को मातृसत्तात्मक से पितृसत्तात्मक स्वरूप में ढालने के लिये महिला के लिये एक लैंगिक सम्बन्ध एवं पति पर पूर्णरूपेण आर्थिक निर्भरता को हथियार बनाया था। अतः यह उचित प्रतीत होता है कि जिन हथियारों के सहारे महिलाओं को कमजोर बनाया गया है उनके विपरीत राह अख्तियार कर नारी को सशक्त किया जाय, किन्तु इस क्रम में सामाजिक ताने–बाने में आमूल चूल परिवर्तन होगा जिसे वर्तमान समाज सहजता से स्वीकार नहीं कर पायेगा। एक विक्षोभ होगा, हितों का टकराव होगा, परिवार टूटेंगे एवं मर्यादाओं का हनन होगा और कहीं न कहीं लोक प्रशांति विक्षुब्ध होगी।

शब्दकोशः *नारी सशक्तीकरण, शिक्षा, संवैधानिक सुरक्षा एवं महिला संरक्षण।*

प्रस्तावना

महिला संरक्षण एवं सशक्तीकरण के लिये घर की चारदीवारी से लेकर बाजार एवं कार्यस्थल तक कानून बना दिये गये फिर भी यह कटु सत्य है कि सम्बन्धित विधियों को उपादेयता उत्साहजनक नहीं रही। फ्रेडरिक वॉल सेविनी ने माना था 'विधि लोकचेतना का उत्पाद होती है और लोक चेतना राष्ट्र के साथ विकसित होती है।' प्रत्येक राष्ट्र की अपनी संस्कृति, अपना स्वभाव एवं अपना पृथक सहिष्णुता की प्रकृति एवं स्तर होता है। यदि विधि की प्रकृति लोक चेतना के विरूद्ध है तो वह विधि दन्तहीन, विषहीन प्रकृति की होगी और इसमें संकोच नहीं कि महिला संरक्षण के लिये जितनी भी विधियों का सृजन हुआ, वे अंशतः उपरोक्त प्रकृति को आत्मसात किये हुए हैं। इसके पीछे कारण बहुत से हो सकते हैं किन्तु इनकी प्रभावोत्पादकता उत्साहजनक न होने के कारण इनका लोकचेतना के विपरीत होना भी है। आज भी एक महिला अपने पुत्रवधू से अपेक्षा करती है कि वह उसके पुत्र के अधीनस्थ रहे। इस प्रकार दो तिहाई जनमानस की चेतना एक तिहाई चेतना के विपरीत है। नारी सशक्तीकरण की अवधारणा में इन्हीं हितों का टकराव है।

सामाजिक ढाँचा

डीन रास्को पाउण्ड के अनुसार प्रतिस्पर्धी हितों के टकराव में 'न्यूनतम घर्षण के साथ अधिकतम हितों की संतुष्टि' पर ध्यान देना होगा। निश्चय ही नारी को 'अबला' जैसी परिस्थितियों से बाहर निकालना होगा। पोषणीय विकास के लिये राष्ट्र की आधी–आबादी को तथाकथित नैतिकता एवं परम्परा की जंजीरों में जकड़ने के

* एस.सी. गुरिया लॉ कॉलेज, काशीपुर, यू.एस. नगर, उत्तराखण्ड।
** एडवोकेट, एल.एल.बी., एल.एल.एम., फैकल्टी ऑफ लॉ, देलही यूनिवर्सिटी, दिल्ली।

बजाय राष्ट्र की मुख्य धारा में लाना ही होगा किन्तु इस क्रम में राष्ट्र की विरासत, संस्कृति, सामाजिक ताने–बाने को अक्षुण्ण रखना भी जरूरी है क्योंकि भारतीय संस्कृति का विकास अनुभव आधारित है, इसे शाश्वत मूल्य कहा जा सकता है। समाज के स्थायित्व, सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने, सर्वसाधारण के कल्याण और मानव को प्रगति पथ पर आगे बढ़ाने हेतु संस्कृति की रक्षा जरूरी है। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी संस्कृति होती है, न तो अन्य राष्ट्रों से यह उधार ली जा सकती और न ही सहजता से अनुकरणीय हो सकती है। हमें नारी सशक्तीकरण के बहुप्रचारित अभियान में पाश्चात्य देशों की सभ्यता एवं संस्कृति के अन्धाधुन्ध अंगीकरण से बचना होगा अन्यथा समाज का विखण्डन होगा, परिवार का विखण्डन होगा, राष्ट्र रूपी संयुक्त इकाई भी इसके दुष्प्रभाव से वंचित नहीं रहेगी।

आज कल तेजी से वैवाहिक सम्बन्धों का विखण्डन हो रहा है। विवाह–विच्छेद के आधारों में वृद्धि हो रही है। तथाकथित सुधारवादियों एवं नारी सशक्तीकरण के पुरोधाओं के द्वारा अब तो यह भी कहा जा सकता है कि चाहे कोई आधार हो या न हो, कोई कारण हो या न हो, यदि पक्षकार आपस में नहीं रहना चाहते तो इसे असमाधेय भंग के सिद्धान्त के अनुसार विवाह को विखण्डित कर देना चाहिए। यह स्मरणीय है कि विवाह के गर्मजोशी भरे वातावरण में अधिकारों की मांग नहीं, अधिकारों का अध्यर्पण किया जाता है। पक्षकारों के त्याग व समर्पण से वैवाहिक जीवन की अट्टालिका सशक्त एवं समृद्ध होती है।

अधिकारों की मांग व स्वायत्तता, स्वच्छन्दता की बात की जाती है। बेशक नारियों को सशक्त बनाया जाना जरूरी है किन्तु कालजयी परम्पराओं, व्यवस्थाओं एवं शाश्वत मूल्यों को कुचलकर, सामाजिक ताने–बाने को ध्वस्त करके नहीं। एक खूबसूरत सामंजस्य, एक अच्छा विकल्प हो सकता है जिसमें अधिकारों की ही बात न होकर संरक्षण की ही बात न होकर, त्याग, समर्पण, बलिदान की भी बात, दायित्व की भी बात, कर्त्तव्य की भी बात होनी चाहिए। जिससे एक तरफ जहां नारियां सशक्त हो सके तो दूसरी तरफ समाज, संस्कृति के शाश्वत मूल्य अक्षुण्ण रह सकें। इस निष्कर्ष पर अमल करने का यह सही वक्त है जिससे विलम्ब न्याय को पराजित न कर सके। यह उक्ति अति समीचीन है कि–

"स्याह रात नहीं लेती है नाम ढलने का, यही तो वक्त है सूरज तेरे निकलने का।"

– शहरयार

संविधान के अनुच्छेद 15 खण्ड (3) में यह प्रावधान किया गया है कि राज्य स्त्रियों एवं बच्चों के हित में विशेष प्रावधान बना सकेगा। अनुच्छेद 15 खण्ड (1) और (2) का खण्ड (3) अपवाद माना जा रहा था परन्तु मण्डल कमीशन के मामले के पश्चात जहां यह रेखांकित कर दिया गया है कि अनु. 15 खण्ड (4) खण्ड (1) और (2) का अपवाद नहीं है। अतः अनु. 15 खण्ड (3) अब अनु. 15 की व्यापक योजना का ही अंग हो गया है। उच्चतम न्यायालय ने आन्ध्र प्रदेश सरकार बनाम पी.वी. विजय कुमार[1] ने यह स्पष्ट निर्धारित किया है कि अनु. 15 खण्ड (3) अत्यंत व्यापक है और यदि महिलाओं के उत्थान के लिए सरकार कोई विशेष उपबन्ध करती है या नौकरियों में आरक्षण में अनु. 16 द्वारा भी बाधा नहीं पहुँचेगी। इन दोनों अनुच्छेदों को समन्वयात्मक दृष्टि से निर्वचित करना चाहिए क्योंकि इन दोनों का उद्देश्य समाज के कमजोर तबकों का उत्थान करना है। ऐतिहासिक दृष्टि से अन्य कारणों से भी महिलायें समाज के कमजोर तबके से आती है और उन्हीं के उत्थान के लिए 15(3) का निर्माण हुआ है और इसका अत्यंत उदार एवं व्यापक निर्वचन किया जाना चाहिए। इस आधार पर उच्चतम न्यायालय ने आन्ध्र प्रदेश सरकार द्वारा महिलाओं को ऐसी नौकरियों में वरीयता देने का निर्णय जो उनके बहुत अनुकूल हो, 30 प्रतिशत अन्य नौकरियों में आरक्षण देने और महिलाओं के लिए आरक्षित पदों में सीधी भर्ती को संवैधानिक घोषित किया। इसी तरह गायत्री देवी पंसारी बनाम उड़ीसा राज्य[2] में उड़ीसा सरकार के उस आदेश को संवैधानिक ठहराया जिसमें रात दिन खुले रहने वाले देवा की दुकानों में स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत स्त्रियों को 30 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया था। उसके पहले युसूफ अली अब्दुल अजीज बनाम बम्बई

[1] ए.आई.आर. 1995 एस.सी. 1648.
[2] ए.आई.आर. 2000 एस.सी. 153.

राज्य[1] में उच्चतम न्यायालय ने अनु. 15 खण्ड 3 के आधार पर ही परस्त्री संबंध (जारकर्म) के अपराध के संबंध में स्त्री को दोषी न मानकर पुरुष को अपराधी मानने के कानून को वैध घोषित किया था। न्यायालय ने कहा था कि यह प्रावधान एक विशेष प्रकार का प्रावधान है जो महिलाओं के लिए बनाया गया है और अनु. 15 खण्ड (3) द्वारा इसको संरक्षण प्राप्त है। हालाँकि धारा 487, भारतीय दण्ड संहिता को अब असंवैधानिक घोशित किया जा चुका है। सी.पी.सी. के नियम 15 के आदेश 5 में प्रतिवादी के न मिलने पर किसी भी पुरुष को सूचित करने का प्रावधान है परन्तु उसमें महिलाओं को सम्मिलित नहीं किया गया है और इसे अनु. 15 खण्ड (3) का संरक्षण प्राप्त है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 354 में केवल स्त्रियों की शुचिता की रक्षा की बात कही गयी है वह भी 15 खण्ड (3) द्वारा संरक्षित है। सी.एम. मुदलियार बनाम श्री स्वामीनाथ स्वामी थीरूकोइल[2] में महिलाओं की सम्पत्ति के सम्बन्ध में सीमित स्वामित्व को पूर्ण स्वामित्व में हिन्दू उत्तराधिकार अधि. 1956 की धारा 14 को परिवर्तित कर दिया गया। इसे भी उच्चतम न्यायालय ने 15 खण्ड (3) के अन्तर्गत संवैधानिक माना है। हिन्दू उत्तराधिकार अधि. 1956 में सन् 2005 के संशोधन अधि. के द्वारा अब महिलाओं को भी पुरुषों के समान ही पूर्ण स्वामित्व और बराबरी का हिस्सा प्रदान कर दिया गया है। अब बेटियों को भी पुत्रों के तरह ही पैतृक सम्पत्ति में बराबर का हिस्सा प्राप्त होगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अनु. 15 खण्ड (3) अपने आप में पूर्णतः निरपेक्ष है और यदि राज्य महिलाओं के उत्थान के लिए कोई विशेष प्रावधान बनाना चाहता है तो इस अनु. के द्वारा ऐसे प्रावधान पूर्णतः संरक्षित माने जायेंगे। संविधान निर्मात्री सभा में जब इस प्रावधान पर विचार हो रहा था तो संविधान सभा के सलाहकार श्री बी.एन. राव ने इस संदर्भ में वाशिंगटन में जस्टिस फ्रैंक फरटर द्वारा अभिव्यक्त विचारों को सभा के सामने रखा था। जिसमें उन्होंने कहा था कि महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए कुछ विशेष प्रावधानों का होना अत्यन्त आवश्यक है, उदाहरण के लिए बच्चों के जन्म के पहले और बाद की स्थितियों में उन्हें विशेष छूट दिया जाना आवश्यक है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारतीय संविधान में नारी को सशक्त करने के लिए विशेष प्रावधान किये गये हैं। संविधान के अनु. 243 में संविधान के 73वें संशोधन विधेयक 1992 द्वारा महिलाओं की स्थिति में विशेष सुधार किया गया है और पंचायती राज्य व्यवस्था में उन्हें आरक्षण प्रदान किया गया है और 243 (डी) में जो आरक्षण की व्यवस्था की गयी है उसमें स्प्ष्ट किया गया है कि अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए पंचायत के सदस्यों की संख्या में चुने जाने के लिए पंचायत के सदस्यों की संख्या में चुने जाने के लिए जो आरक्षित स्थान किये जायेंगे उसमें आरक्षित संख्या के कुल भाग के 1/3 भाग अनुसूचित जाति एवं जनजाति के महिलाओं के लिए सुरक्षित रहेगा साथ ही 243 (डी) खण्ड (3) में यह भी कहा गया है कि प्रत्येक पंचायत में निर्धारित संख्या का 1/3 भाग महिलाओं के लिए आरक्षित रहेगा उसमें अनुसूचित जाति एवं जनजाति के महिलाओं की संख्या भी सम्मिलित की जायेंगी।

इसी तरह संविधान के 74वें संशोधन के द्वारा संविधान में 12वीं अनुसूची भी जोड़ी गयी है जो अनु. 243 (पी) में संहित हैं वहाँ भी नगरपालिकाओं एवं नगरनिगमों में स्थानों को उसी क्रम में महिलाओं के लिए आरक्षित किया गया है जहाँ 342(टी) खण्ड (2) में यह कहा गया है कि इन संस्थानों के लिए आरक्षित स्थानों में से 1/3 स्थान अनुसूचित जाति एवं वांछित स्थान पर अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित होंगे और 243 (टी) खण्ड 3 में यह कहा गया है कि सम्पूर्ण स्थानों का 1/3 भाग महिलाओं के लिए आरक्षित रहेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय प्रजातंत्र में प्राथमिक स्तर से ही महिलाओं की भागीदारी को पूर्ण सुनिश्चित करने के लिए संविधान का 73वाँ 74वाँ संशोधन (11वीं एवं 12वीं अनुसूची) महिला सशक्तिकरण अध्याय का 'मैग्नाकार्टा' है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् लोकसभा एवं विधान सभा के चुनावों में भी महिलाओं की निरंतर प्रगति होती गयी है जहाँ पहली लोकसभा 1952 में 499 लोकसभा के स्थानों में महिलाओं की संख्या 22 अर्थात् 4.4

[1] ए.आई.आर. 1954 एस.सी. 32.
[2] ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 1697.

प्रतिशत थी वहीं 13वीं लोकसभा के चुनावों में 1999 में 543 स्थानों में से उनकी संख्या 48 अर्थात् 8.8 प्रतिशत थी और 14वीं लोकसभा के चुनाव में सन् 2004 में 539 स्थानों में से 44 स्थान महिलाओं के थे जो 8.8 प्रतिशत का अनुपात दर्शाता है। राज्यसभा में 1996 में 236 स्थानों में से 24 स्थान महिलाओं का था जिसका प्रतिशत 10. 17 था। 1999 में 235 में से उनका स्थान 20 था जो सम्पूर्ण का 8.51 था। मंत्रीमण्डल में भी 1985 में कैबिनेट महिला मंत्रियों की संख्या 15 थी और 2000 में वह 29 पहुँच गयी। राज्यमंत्री, उपमंत्रियों की संख्या अलग है। राज्यपाल, राज्यसभा के उपसभापति एवं उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पदों पर भी महिलाओं की नियुक्तियाँ उनके वर्तमान प्रस्थिति को स्पष्ट करती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि महिलायें आज ग्राम पंचायतों, जिला पंचायतों, नगरपालिकाओं एवं नगर निगमों में बढ़चढ़कर भागीदारी कर रही है अब वे–

"अबला जीवन हाय
तुम्हारी यही कहानी
आंचल में है दूध
और आँखों में पानी।"

मैथिलीशरण गुप्त

का प्रतीक न होकर 'देवी, सहचरी, प्रिये, प्राण' के रूप में कार्य कर रही हैं इतना अवश्य है कि पुरुष प्रधान समाज की मानसिकता के कारण पंचायती क्षेत्रों में महिलायें आज भी अपने पतियों के इशारे पर ही काम कर रही हैं, परंतु यह समय की मांग है और धीरे–धीरे कार्य करते–करते महिलाओं में आत्मविश्वास की भावना बढ़ती गयी है। मायावती जी का मुख्यमंत्रित्वकाल अधिकारियों के लिए एक शिक्षाप्रद काल रहा है। जयललिता ने भी नारी की सत्ता का पूर्ण परिचय दिया है फिर भी अभी महिलाओं की स्थिति में बहुत कुछ किया जाना बाकी है। 1996 से संसद में महिलाओं की राजनीति में भागीदारी बढ़ाने के लिए संसद एवं विधानसभाओं में स्थानों के आरक्षण का प्रावधान प्रस्तुत किया गया था परन्तु अनेक कारणों से यह संशोधन आज तक पारित न हो सका है। यदि राजनीतिक दल संसदीय एवं विधानसभा चुनावों में अपने दल से 1/3 सदस्य संख्या महिलाओं के लिए आरक्षित करें और अनुसूचित जाति एवं जनजाति के सुरक्षित स्थानों में से भी 1/3 भाग महिलाओं को देने के लिए नियम बना ले तो यह प्रबल सार्थक कदम होगा। साथ ही राजनीतिक दलों में शीर्षस्तर पर महिलाओं को पद दिया जाय एवं महिलाओं को आदर एवं सम्मान का भाव दिया जाय तो भारतीय संविधान के अनु. 15 खण्ड (3) का सही रूप में चलन हो सकेगा।

उच्चतम न्यायालय ने अपने अनेक निर्णयों में महिलाओं की प्रस्थिति को बढ़ाने का प्रयास किया है। महिलाओं का शोषण, उनके साथ भेदभाव को रोकना, कार्यालयों में उनके साथ अश्लील व्यवहार करने इत्यादि को न्यायालय ने बहुत गंभीरता से लिया है। भारतीय विधायिका ने भी दहेज प्रतिषेध अधिनियम, गर्भसमापन अधिनियम, एसिड अटैक एवं बलात्कार के प्रति भारतीय दण्ड संहिता में संशोधन जैसा कार्य करके महिलाओं को पर्याप्त राहत प्रदान की है। किन्तु हाल ही में भारतीय दण्ड संहिता को निरस्त करने के लिए भारतीय न्याय संहिता, 2023 सम्बन्धी विधेयक लोक सभा में प्रस्तुत किया गया है। जिसमें महिलाओं की वि ोश सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए नाबालिग के सामूहिक बलात्कार पर मृत्युदण्ड एवं धोखेबाजी से सेक्सुअल इंटरकोर्स पर कठोर दण्ड का प्रावधान भाामिल किया गया है।

आयकर कानून में भी 3,00,000 की वार्षिक आमदनी पर कर देने से छूट प्रदान की गयी है। इसी प्रकार अनेक ऐसे विधि के प्रावधान हैं जिनमें उनको विशेष प्रस्थिति मिल रही है। यह सही है कि इन सभी कानूनों, न्यायिक निर्णयों से हम महिलाओं के सम्बन्ध में वांछित परिणाम प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं फिर भी प्रयास अत्यन्त ही सराहनीय है और निश्चित रूप से महिलाएं अपने को हीन भावना से मुक्त कर रही हैं।

दाम्पत्य जीवन में भी अब नारियाँ पुरुष वर्ग पर पूर्णतः निर्भर रहकर दासी की तरह जीवन बिताने के लिए बाध्य नहीं है। उनकी आर्थिक स्थिति स्वतन्त्रता और नौकरी पाने के अवसर ने उन्हें बराबरी का दर्जा दिया है। उच्चतम न्यायालय ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की महिलावादी व्याख्या ही की है और पूर्व में डी.आई.जी., डी.के. पण्डा की पत्नी को गुजारा भत्ता दिलाने का उन्हें निर्देश दिया है। तलाक कानूनों में भी न्यायालय ने महिला परख व्याख्या की है। हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 में तलाक के दिये गये आधारों में एक नया आधार जोड़ने की संस्तुति संसद से की है और निर्दयता, दो वर्ष से ज्यादा अलग रहना, दूसरे धर्म में परिवर्तन, पागलपन या गंभीर बीमारियों का त्याग जैसे आधारों के साथ–साथ इस आधार को भी जोड़ने के लिए कहा है कि यदि विवाह इस स्तर पर पहुँच गया हो जहाँ उसे पुनः वैवाहिक संबंध न जोड़ा जा सके तो इस आधार पर भी जिसे न्यायालय ने "Irretrievable Break Down of Marriage" कहा है।

इस संशोधन का आशय यह है कि जब विवाह प्रत्येक कार्यों के लिए टूट सा गया है, पुनर्मिलन की कोई आशा न हो तो उसे तलाक का आधार मान लेना चाहिए। नवीन कोहली एवं नीलू कोहली के मामले में 21 मार्च 2006 को दिये गये अपने निर्णय में यह कहा है कि यदि विवाह पूर्ण रूप से टूट गया हो और बिना पुनर्मिलन की आशा में पति–पत्नी वर्षों से अलग रह रहे हों तो न्यायालय को इस आधार पर भी तलाक की अनुमति प्रदान कर देना चाहिए, भले ही हिन्दू विवाह अधिनियम में यह आधार न दिया गया हो। यह सिद्धांत इंग्लैण्ड के 1969 के तलाक सुधार अधिनियम में सन्निहित है और इसके निम्न आधार हैं–

- जहाँ उत्तरदाता जारकर्म में संलिप्त हो और प्रार्थी उसके साथ रहना असहनीय मान रहा हो।
- प्रत्यर्थी या उत्तरदाता ने इस प्रकार किया हो कि प्रार्थी उसके साथ उपयुक्त ढंग से रहने में अपने को असमर्थ पा रहा हो।
- प्रार्थी द्वारा प्रार्थनापत्र दिये जाने के ठीक दो वर्ष पहले से प्रत्यर्थी उससे अलग रह रहा हो।
- दोनो पक्षकार दो वर्ष से ज्यादा अलग रह चुके हों और प्रार्थना पत्र देते समय प्रत्यर्थी ने तलाक के प्रति सहमति दे दिया हो।
- पाँच वर्षों तक (प्रार्थनापत्र देने के समय से) दोनों अलग रह रहे हों।

अतः यही पुनः न वापसी का सिद्धांत है जिसके आधार पर न्यायालय तलाक की अनुमति दे सकते हैं। कानून में तलाक का आधार न होने पर भी इससे महिलाओं को बहुत राहत मिलेगी क्योंकि अधिकांश पति वर्षों तक पत्नियों को छोड़कर दूसरों के साथ सम्बन्ध बनाते हैं और उन्हें घुटघुट कर मरने के लिए मजबूर कर देते हैं। अतः यह निर्णय भी महिलाओं के लिए एक वरदान है इससे पुरुष को भी लाभ मिल सकता है।

निष्कर्ष

अनु. 15 खण्ड (3) की सुसंगता को सिद्ध करने के लिए सरदार बल्लभ भाई पटेल ने संविधान निर्मात्री सभा में कहा था कि अपने देश की वर्तमान परिस्थितियों में इसको रखा जाना अत्यन्त आवश्यक है।[1] प्रारंभ में अनु. 15 खण्ड (3) को उसी संदर्भ में लागू करने की बात कही गयी थी जहाँ महिलाओं और बच्चों को लाभ मिलने की संभावना हो और इसीलिए हिन्दू को सम्पत्ति के अधिकार से वंचित करना और भारत सरकार का पुराना नियम स्त्रियों को आई.ए.एस. में भर्ती नहीं किया जायेगा को तभी उपयुक्त मानने का निर्णय लिया गया जब वह नियम स्त्रियों के हित में हो। इन परिस्थितियों के पश्चात भी अंजलि बनाम वेस्ट बंगाल[2] में यह निर्णय दे दिया गया कि किसी भी विद्यालय में महिलाओं की भर्ती का समान अधिकार नहीं है और न ही किसी कक्षा की किसी पंक्ति में विशेष बेंच पर ही बैठने का अधिकार है। यह बात दूसरी है कि अब निर्वचन के क्षेत्र में

[1] सी.ए.डी. वाल्यूम तृतीय, पृ. 410.
[2] ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 825.

व्यापक परिवर्तन हो गया है। इसी तरह अनु. 23 में शोषण के विरूद्ध अधिकार प्रदान करते हुए मानव के दुर्व्यवहार और बलातश्रम का प्रतिषेध कर दिया गया हैं संविधान निर्मात्री सभा में इस पर लम्बी बहस हुयी थी और मानव दुर्व्यवहार की परिभाषा में कुछ निश्चित प्रथाओं को यथा वेश्यावृत्ति, देवदासी प्रथा स्त्रियों द्वारा गुलामी इत्यादि को उसमें लाने की बात कही गयी थी उसमें White Slave Traffic शब्द को भी जोड़ने की बात कही गयी जिसका तात्पर्य एक देश से दूसरे देश में नवयुवतियों का आयात निर्यात करना, उन्हें बेचना या खरीदना सम्मिलित माना जाता था और उन्हें व्यापार की वस्तु बना दिया जाता था। इस प्रकार मानव दुर्व्यवहार विशेषकर स्त्रियों को उससे मुक्त करने के लिए अनु. 23 की रचना की गयी थी। मानव दुर्व्यवहार के अंतर्गत अनैतिक उद्देश्यों के लिए महिलाओं और बालक–बालिकाओं का क्रय–विक्रय[1] तथा दासता[2] को भी सम्मिलित किया गया है। संसद ने महिलाओं की इन परिस्थितियों में रक्षा करने के लिए और अनु. 23 के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए 'स्त्री तथा लड़की अनैतिक व्यापार दमन अधिनियम 1956* पारित किया है और उच्चतम न्यायालय ने विशालजीत बनाम भारत संघ[3] में इस अधिनियम के अन्तर्गत अनैतिक व्यापार को एक दण्डनीय अपराध माना है।

इस प्रकार अनु. 15 खण्ड (3) और 23 (1) महिलाओं को संविधान का सुरक्षात्मक कवच प्रदान करते हैं।

स्पष्टतः नारी के नारीत्व एवं पुरुष के पौरूष का संगम ही पृथ्वी पर स्वर्गीय जीवन की अनुभूति करा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. सरजू प्रसाद चौबे : शिक्षा के आधार, भारदा पुस्तक भवन, पब्लि ार्स एण्ड डिस्ट्रीव्यूटर्स।
2. पी.डी. पाठक : समसामयिक भारतीय शिक्षा, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. प्रो. ज्योति प्रसाद सूद : पाश्चात्य राजनीतिक विचारों का अतिहास भाग–2 (मैकियावेली से बर्क तक) के. नाथ एण्ड के.– गढ़ रोड मेरठ।
4. डॉ. पार्थसारथी पाण्डेय एण्ड डॉ. नीता पाण्डेय : प्रारम्भिक शिक्षा के नवीन प्रयास, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

❖◆❖

[1] रामबहादुर बनाम रिमेम्बरांसर, ए.आई.आर. 1953, 522.
[2] दुबर बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 1952, 496.
[3] (1990) 3 ए.सी.सी. 318.